International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(1): 509-510

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(1): 509-510
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 02-11-2020
Accepted: 25-12-2020

रश्मि आर्या
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली,
दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
रश्मि आर्या
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली,
दिल्ली, भारत

स्फोटसिद्धिः व्याकरणदर्शन के क्षेत्र में एक अद्भुत योगदान

रश्मि आर्या

प्रस्तावना

संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास विश्व में उपलब्ध समस्त व्याकरण–शास्त्रों की अपेक्षा अधिक प्राचीन एवं विस्तृत है। आचार्य पाणिनि से पूर्ववर्ती 85 तथा पश्चाद्वर्ती अनेकानेक व्याकरणाचार्यों द्वारा रचित व्याकरण–ग्रंथों से सम्वर्द्धित यह व्याकरण–वाङ्मय साधारण जन द्वारा दुस्तर है। कात्यायन–पतंजलि आदि अनेक वैय्याकरणों ने वार्तिक–महाभाष्यादि अनेक ग्रन्थों की रचना कर व्याकरण शास्त्र सदृश दुर्गम श्रृंखला को पार करने के लिए सुगम सोपानयुक्त मार्ग प्रदान किया है।

व्याकरण दर्शन का शुभारंभ वैदिक काल से ही हो गया था। 'गोपथ ब्राह्मण' में ऐसे अनेक उल्लेख हैं जिनसे शब्दतत्वज्ञान का रहस्य स्पष्टतया उद्घाटित होता है। यह सर्वमान्य सिद्धांत है कि शब्द का उद्गम–स्रोत नाद–बिन्दु–कला स्वरूप प्रणव है। अतः वहाँ शब्द के विश्लेषण पर विचार करते हुए उससे ही यह जिज्ञासा की गयी है– ''ओकांरम् पृच्छामः– को धातुः? किं प्रातिपदिकम्? किं लिङ्गम्? किं वचनम्? का विभक्तिः? कः प्रत्ययः? इति ।'' [1] व्याकरण–दर्शन का मूल हमें पतंजलि के महाभाष्य में भी मिलता है परन्तु व्याकरण–दर्शन के प्रमुख सिद्धांत ''स्फोटवाद'' का नियमित एवं श्रृंखलाबद्ध प्रतिपादन सर्वप्रथम भर्तृहरि के 'वाक्यपदीय' प्राप्त होता है। वाक्यपदीय व्याकरण–दर्शन का प्रथम निबंध ग्रंथ है।

जिस युग में शब्दतत्व का सूक्ष्म चिन्तन प्रारंभ हुआ वही इसके दार्शनिक रूप के उद्भव का क्षण था। इस दिशा में सबसे प्राचीन आचार्य स्फोटायन माने जाते हैं। ये ही संभवतः 'स्फोटवाद' के जन्मदाता रहे हैं। पाणिनि ने इनका उल्लेख 'अवङ्ग स्फोटायनस्य' [2] में किया। शब्दतत्व के अतिप्राचीन चिन्तकों में औदुम्बरायणाचार्य का भी स्थान है। इस परम्परा में आचार्य व्याडि की रचना ''संग्रह'' का उल्लेख भाष्यकार पतंजलि ने किया है। इसके बाद पतंजलि का महाभाष्य ही है। इस ग्रंथ–सिन्धु में व्याकरण–दर्शन के समस्त पदार्थों का विवेचन भिन्न–भिन्न स्थलों पर किया गया है। इस विकीर्ण सामग्री को क्रमबद्ध व्यवस्थित रूप देने के लिए आचार्य भर्तृहरि (चतुर्थ शती) ने वाक्यपदीय नामक ग्रन्थ की रचना की। इसमें तीन काण्ड हैं। प्रथम ब्रह्मकाण्ड, द्वितीय वाक्यकाण्ड एवं तृतीय पदकाण्ड।

व्याकरण–दर्शन के प्रति जनता को प्रवृत्त करने के लिए भर्तृहरि शब्दतत्व के निरूपण हेतु अग्रसर हुए और उन्होंने शब्दज्ञान को मोक्ष का हेतु प्रतिपादित किया। इनके समय तक जनसाधारण कर्मकाण्ड पर आधारित पूर्व–मीमांसा, ज्ञानकाण्ड पर आधारित उत्तर–मीमांसा, सांख्ययोग्य, न्यायवैशेषिक, जैन–बौद्ध आदि दर्शनों के ज्ञान को मोक्ष का हेतु समझता था। इसके अतिरिक्त मंडनमिश्रकृत स्वोपज्ञ व्याख्या सहित 'स्फोटसिद्धि' तथा भरतमिश्र द्वारा भी इसी नाम से लिखी गई 'स्फोटसिद्धि', केशव कविकृत 'स्फोटप्रतिषठा', शेषश्रीकृष्णकविकृत स्फोटतत्व तथा नागेशभट्टकृत स्फोटवाद आदि ग्रंथ व्याकरण–दर्शन के प्रमुख तत्व 'स्फोट' का सयुक्तिक प्रतिपादन करते हैं।

भर्तृहरि ने सर्वप्रथम 'स्फोटसिद्धांत' की सुव्यवस्थित आधारशिला रखी। 'स्फुट विकसने' धातु से घन् प्रत्यय करने पर स्फोट शाब्द बनता है। जिससे अर्थ का बोध होता है, उसे स्फोट शब्द कहते हैं क्योंकि ''स्फुटति अर्थो यस्मात् स स्फोटः'' इस निर्वचन से यह अर्थ प्रकट होता है। वर्णात्मक–पद या पदात्मक–वाक्य से अर्थबोध न होने में बाधा यह है कि वर्णोत्पत्ति का एक क्रम है, जिसमें प्रथम वर्ण के उच्चारण के बाद दूसरे वर्ण के उच्चारण के समय प्रथम वर्ण की स्थिति नहीं रहती। इसलिए वर्णों का समूहरूप एक पद की सिद्धि नहीं होती अतः अर्थबोध संभव नहीं।

नैयायिक वर्ण की उत्पत्ति मानते हैं इसलिए वर्ण अनित्य है क्योंकि जो उत्पन्न होता है उसका नाश भी ध्रुव सत्य है। यद्यपि मीमांसक वर्ण को नित्य मानते हैं। उनके मत में वर्ण की अभिव्यक्ति होती है, उत्पत्ति नहीं। नित्यवर्णों के रहते हुए वर्णों से अतिरिक्त स्फोटशब्द तत्व को वे स्वीकार नहीं करते, किन्तु वर्णों के नित्यत्वपक्ष में भी स्फोट तत्व आवश्यक है क्योंकि जिस क्रम से वर्ण अभिव्यक्त होंगे, उसी क्रम से उनका स्मरण भी हो यह नियम नहीं है। अर्थबोध की समस्या तो तब सुलझती है जब हम एक नित्य शब्द स्वीकार करते हैं, जिसे व्याकरण–दर्शन में 'स्फोटतत्व' कहा गया है।

एक पद या एक वाक्य की प्रतीति भी वर्ण और पदों से अतिरिक्त एक स्फोटतत्व स्वीकार करने पर ही संभव है, क्योंकि पद में वर्ण अनेक हैं तथा वाक्य में भी पद बहुत हैं, फिर एक शब्द का आधार क्या है? इसके समाधान के लिए एक नित्य शब्द है, जो वर्णों की अभिव्यक्ति का आधार है तथा वर्णों से अभिव्यक्त होता है। उस एक नित्य शब्द को पतंजलि ने 'स्फोट' कहा है– स्फोटः शब्दः ध्वनिः शब्दगुणः, कथम्? भेर्याघातवत् तद्यथा भेर्याघातमाहत्यः कश्चिद् विंशति पदानि गच्छति, कश्चिद् त्रिंशत्, कश्चिद् चत्वारिंशत्, स्फोटश्च तावानेव भवति ध्वनिकृता वृद्धिः''।

ध्वनिः स्फोटश्च शब्दानां ध्वनिस्तु खलु लक्ष्यते।
अल्पोमहाँश्च केषांचिदुभयं तत्स्वभावतः।। [3]

यदि कोई कहे कि जिस प्रकार वृक्षों का समूह ही एक वन होता है, उसी प्रकार वर्णों का समूह ही पद है, वर्ण से अतिरिक्त स्फोट मानने की जरूरत नहीं है? तो इसका समाधान यह है कि पद में वर्ण तथा वाक्य में पदों का आभासमात्र रहता है। वस्तुतः पद या वाक्य तो अखण्ड है। इसे विषय में भर्तृहरि का उद्घोष है कि–

''पदे न वर्णा विद्यन्ते वर्णेष्वयवा न च।
वाक्यात् पदानामत्यन्तं प्रविवकेको न कश्चन'' [4]

मूलतः स्फोट वक्ता और श्रोता दोनों के अन्तःकरण में मध्यमावाक् रूप से सदा वर्तमान रहता है। श्रोता और वक्ता के साथ स्फोट के सम्बन्ध को अभिव्यक्त करते हुए पतंजलि ने कहा है–

''श्रोत्रोपलब्धिर्बुद्धिनिर्ग्राह्यः प्रयोगेणाभिज्वलित आकाशदेशः शब्दः।।'' [5]

स्फोटसिद्धान्त को 'आचार्य मण्डनमिश्र ने अपने ग्रन्थ ''स्फोटसिद्धि' में अभिप्रकाशित कर स्थापित किया। इस ग्रन्थ के अध्ययन बिना स्फोटवाद के गूढार्थ का पूर्णरूप से अवबोध सम्भव ही नहीं है।
मण्डनमिश्र की स्फोटसिद्धि पर वाक्यपदीय का विशेष प्रभाव लक्षित होता है। इनकी गणना एक वैयाकरण के रूप में की जाती है। विद्वानों ने इनका समय 65 ईस्वी के आस–पास निर्धारित किया है। इत्सिंग ने इन्हें बौद्ध प्रमाणित करने का प्रयास किया। यमुनाचार्य के 'सिद्धित्रय', सोमानंद और उत्पल देव की 'शिवदृष्टि' तथा उनकी वृत्ति और प्रत्यग्रूप की 'चित्सुखी टीका' में इन्हें अद्वैतवादी कहा गया है।
''स्फोटिसिद्धि'' नामक ग्रन्थ गद्य–पद्य शैली में लिखा गया है, जिसमें ''37 कारिकाएँ'' है। इस ग्रन्थ को आधार बनाकर गिने–चुने ही कार्य हुए हैं, जिनमें ऋषिपुत्रपरमेश्वर–विरचित, ''गोपालिका टीका'' अत्यधिक महत्त्वपूर्ण तथा विद्वन्मनोरंजिनी है। इसमें लगभग 300 पृष्ठों में स्फोटसिद्धान्त की विशद व्याख्या प्रस्तुत की गयी है। नव्यन्याय की विधा से प्रभावित होने पर भी यह टीका स्फोटसिद्धान्त के गूढ पक्षों को सरलता से प्रकाशित करने में पूर्णतया सहायक है।
सन् 1958 ई. में M- Biardean ने मण्डनमिश्रकृत 'स्फोटसिद्धि' का फ्रेंच–अनुवाद प्रस्तुत किया और सन् 1966 ई. में के.ए. सुब्रह्मण्यम् अय्यर ने इसी कृति का अंग्रेजी अनुवाद प्रस्तुत किया। ऊषा मलिक ने सन् 1980 ई. में पीएच.डी. उपाधि निमित्त दिल्ली विश्वविद्यालय के अन्तर्गत "Mandan Mishra Krit Sphotsiddhi: A study of Mandan Mishra's Sphotsiddhi" शोध–प्रबन्ध प्रस्तुत किया। यह शोध–प्रबन्ध सन् 2000 ई. में विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली से प्रकाशित भी हो चुका है।
इस प्रकार हम देख सकते हैं कि भारतीय शास्त्र परम्परा में शब्दशास्त्र का महत्त्व सर्वोपरि है। यदि शब्दरूपी प्रकाश से यह संसार प्रकाशित नहीं होता तो तीनों लोकों में अधंकार व्याप्त हो जाता। कहा भी गया है–

इदमन्धन्तमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम्।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते।। [6]

भारत में व्याकरण–शास्त्र की एक सुदीर्घ परम्परा प्राप्त होती है। इस परम्परा को कायम रखने का श्रेय विभिन्न वैयाकरणों को दिया जाता है। इन्हीं वैय्याकरणों की श्रृंखला में मूर्धन्य स्थान पर विराजित आचार्य मण्डनमिश्र की रचना स्फोटसिद्धि अपने आप में एक महत्त्वपूर्ण कृति है, जिसने व्याकरण वाङ्मय तथा व्याकरण दर्शन को एक नया आयाम प्रदान किया।

सन्दर्भ–

1. गोपथ, 1/1/24
2. पा.सू., 6/1/123
3. महाभाष्य, 1/1 सूत्र. 69
4. वाक्यपदीय, 1.85
5. महाभाष्य, प्र.सं. 1 अइउण्
6. दण्डी, काव्यादर्श 1.4